1 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

हिन्दी के इस प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार का जन्म 4 अक्टूबर, 1884 ई० में बस्ती जिले के अगोना नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम पं० चन्द्रबली शुक्ल था, जो सुपरवाइजर कानूनगो थे। बालक रामचन्द्र शुक्ल ने एण्ट्रेन्स (हाईस्कूल) की परीक्षा मिर्जापुर जिले के मिशन स्कूल से उत्तीर्ण की। गणित में कमजोर होने के कारण इनकी शिक्षा आगे नहीं बढ़ सकी। इण्टर की परीक्षा के लिए कायस्थ पाठशाला, इलाहाबाद में प्रवेश लिया, किन्तु अन्तिम वर्ष की परीक्षा से पूर्व ही विद्यालय छूट गया। इन्होंने मिर्जापुर के न्यायालय में नौकरी कर ली, किन्तु स्वभावानुकूल न होने के कारण छोड़ दी और मिर्जापुर के मिशन स्कूल में चित्रकला के अध्यापक हो गये।

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**–4 अक्टूबर, 1884 ई०।
- **जन्म-स्थान**–अगोना (बस्ती), उ०प्र०।
- **पिता**–चन्द्रबली शुक्ल।
- **मृत्यु**–2 फरवरी, 1941 ई०।
- शुक्ल युग के प्रवर्तक।
- **भाषा**–खड़ीबोली।

इसी बीच स्वाध्याय से इन्होंने हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, बँगला आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया और पत्र-पत्रिकाओं में लिखना आरम्भ कर दिया। बाद में इनकी नियुक्ति काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक पद पर हो गयी। बाबू श्यामसुन्दर दास के अवकाश प्राप्त करने के बाद शुक्लजी ने हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद को भी सुशोभित किया। इसी पद पर कार्य करते हुए 2 फरवरी, 1941 ई० में आप स्वर्ग सिधार गये।

हिन्दी निबन्ध को नया आयाम देकर उसे ठोस धरातल पर प्रतिष्ठित करनेवाले शुक्लजी हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य आलोचक, श्रेष्ठ निबन्धकार, निष्पक्ष इतिहासकार, महान् शैलीकार एवं युग-प्रवर्तक आचार्य थे। इन्होंने सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों प्रकार की आलोचनाएँ लिखीं। इनकी विद्वत्ता के कारण ही 'हिन्दी शब्द सागर' के सम्पादन-कार्य में सहयोग के लिए इन्हें बुलाया गया। इन्होंने 19 वर्षों तक 'काशी नागरी प्रचारिणी' पत्रिका का सम्पादन भी किया। इन्होंने अंग्रेजी और बँगला में कुछ अनुवाद भी किये। आलोचना इनका मुख्य और प्रिय विषय था। इन्होंने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' लिखकर इतिहास-लेखन की परम्परा का सूत्रपात किया।

शुक्लजी एक उच्चकोटि के निबन्धकार ही नहीं, अपितु युग-प्रवर्तक आलोचक भी रहे हैं। इनकी कृतियाँ इस प्रकार हैं :

(1) निबन्ध-संग्रह—'चिन्तामणि' भाग 1 और 2 तथा 'विचार वीथी'।

(2) इतिहास—'हिन्दी साहित्य का इतिहास'।

(3) आलोचना—'सूरदास', 'रसमीमांसा', 'त्रिवेणी'।

(4) सम्पादन—'जायसी ग्रन्थावली', 'तुलसी ग्रन्थावली', 'भ्रमरगीत सार', 'हिन्दी शब्द सागर', 'काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका', 'आनन्द कादम्बिनी'।

(5) अन्य—इसके अतिरिक्त शुक्लजी ने कहानी (ग्यारह वर्ष का समय), काव्यकृति (अभिमन्यु-वध) की रचना की

तथा अन्य भाषाओं के कई ग्रन्थों का हिन्दी में अनुवाद भी किया। इनमें 'मेगस्थनीज का भारतवर्षीय विवरण', 'आदर्श जीवन', 'कल्पना का आनन्द', 'विश्व प्रपञ्च', 'बुद्धचरित' (काव्य), स्फुट अनुवाद, शशांक आदि प्रमुख हैं।

शुक्लजी की भाषा संस्कृतनिष्ठ, शुद्ध तथा परिमार्जित खड़ीबोली है। परिष्कृत साहित्यिक भाषा में संस्कृत के शब्दों का प्रयोग होने पर भी उसमें बोधगम्यता सर्वत्र विद्यमान है। कहीं-कहीं आवश्यकतानुसार उर्दू, फारसी और अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग भी देखने को मिलता है। शुक्लजी ने मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग करके भाषा को अधिक व्यञ्जनापूर्ण, प्रभावपूर्ण एवं व्यावहारिक बनाने का भरसक प्रयास किया है।

शुक्लजी की भाषा-शैली गठी हुई है, उसमें व्यर्थ का एक भी शब्द नहीं आने पाता। कम-से-कम शब्दों में अधिक विचार व्यक्त कर देना इनकी विशेषता है। अवसर के अनुसार इन्होंने वर्णनात्मक, विवेचनात्मक, भावात्मक तथा व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग किया है। हास्य-व्यंग्य-प्रधान शैली के प्रयोग के लिए भी शुक्लजी प्रसिद्ध हैं।

प्रस्तुत **'मित्रता'** निबन्ध शुक्लजी के प्रसिद्ध निबन्ध संग्रह 'चिन्तामणि' से संकलित है। इस निबन्ध में अच्छे मित्र के गुण की पहचान तथा मित्रता करने की इच्छा और आवश्यकता आदि का सुन्दर विश्लेषणात्मक वर्णन किया गया है। इसके साथ ही कुसंग के दुष्परिणामों का विशद् विवेचन किया गया है।

●●

मित्रता

जब कोई युवा पुरुष अपने घर से बाहर निकलकर बाहरी संसार में अपनी स्थिति जमाता है, तब पहली कठिनता उसे मित्र चुनने में पड़ती है। यदि उसकी स्थिति बिल्कुल एकान्त और निराली नहीं रहती तो उसकी जान-पहचान के लोग धड़ाधड़ बढ़ते जाते हैं और थोड़े ही दिनों में कुछ लोगों से उसका हेल-मेल हो जाता है। यही हेल-मेल बढ़ते-बढ़ते मित्रता के रूप में परिणत हो जाता है। मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता पर उसके जीवन की सफलता निर्भर हो जाती है; क्योंकि संगति का गुप्त प्रभाव हमारे आचरण पर बड़ा भारी पड़ता है। हम लोग ऐसे समय में समाज में प्रवेश करके अपना कार्य आरम्भ करते हैं, जबकि हमारा चित्त कोमल और हर तरह का संस्कार ग्रहण करने योग्य रहता है, हमारे भाव अपरिमार्जित और हमारी प्रवृत्ति अपरिपक्व रहती है। हम लोग कच्ची मिट्टी की मूर्ति के समान रहते हैं, जिसे जो जिस रूप का चाहे, उस रूप का करे—चाहे राक्षस बनावे, चाहे देवता। ऐसे लोगों का साथ करना हमारे लिए बुरा है, जो हमसे अधिक दृढ़ संकल्प के हैं; क्योंकि हमें उनकी हर एक बात बिना विरोध के मान लेनी पड़ती है। पर ऐसे लोगों का साथ करना और बुरा है, जो हमारी ही बात को ऊपर रखते हैं; क्योंकि ऐसी दशा में न तो हमारे ऊपर कोई दबाव रहता है और न हमारे लिए कोई सहारा रहता है। दोनों अवस्थाओं में जिस बात का भय रहता है, उसका पता युवा पुरुषों को प्रायः बहुत कम रहता है। यदि विवेक से काम लिया जाय तो यह भय नहीं रहता, पर युवा पुरुष प्रायः विवेक से कम काम लेते हैं। कैसे आश्चर्य की बात है कि लोग एक घोड़ा लेते हैं तो उसके गुण-दोष कितना परख कर लेते हैं, पर किसी को मित्र बनाने में उसके पूर्व आचरण और प्रकृति आदि का कुछ भी विचार और अनुसन्धान नहीं करते। वे उसमें सब बातें अच्छी-ही-अच्छी मानकर अपना पूरा विश्वास जमा देते हैं। हँसमुख चेहरा, बातचीत का ढंग, थोड़ी चतुराई या साहस—ये ही दो-चार बातें किसी में देखकर लोग चटपट अपना बना लेते हैं। हम लोग यह नहीं सोचते कि मैत्री का उद्देश्य क्या है तथा जीवन के व्यवहार में उसका कुछ मूल्य भी है। यह बात हमें नहीं सूझती कि यह एक ऐसा साधन है, जिससे आत्मशिक्षा का कार्य बहुत सुगम हो जाता है। एक प्राचीन विद्वान् का वचन है—'विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है। जिसे ऐसा मित्र मिल जाये, उसे समझना चाहिए कि खजाना मिल गया।' विश्वासपात्र मित्र जीवन की एक ओषधि है। हमें अपने मित्रों से यह आशा रखनी चाहिए कि वे उत्तम संकल्पों में हमें दृढ़ करेंगे, दोषों और त्रुटियों से हमें बचायेंगे, हमारे सत्य, पवित्रता और मर्यादा के प्रेम को पुष्ट करेंगे, जब हम कुमार्ग पर पैर रखेंगे, तब वे हमें सचेत करेंगे, जब हम हतोत्साहित होंगे, तब वे हमें उत्साहित करेंगे। सारांश यह है कि वे हमें उत्तमतापूर्वक जीवन-निर्वाह करने में हर तरह से सहायता देंगे। सच्ची मित्रता में उत्तम-से-उत्तम वैद्य की-सी निपुणता और परख होती है, अच्छी-से-अच्छी माता का-सा धैर्य और कोमलता होती है। ऐसी ही मित्रता करने का प्रयत्न पुरुष को करना चाहिए।

छात्रावास में तो मित्रता की धुन सवार रहती है। मित्रता हृदय से उमड़ी पड़ती है। पीछे के जो स्नेह-बन्धन होते हैं, उसमें न तो उतनी उमंग रहती है, न उतनी खिन्नता। बाल-मैत्री में जो मग्न करनेवाला आनन्द होता है, जो हृदय को बेधने वाली ईर्ष्या और खिन्नता होती है, वह और कहाँ? कैसी मधुरता और कैसी अनुरक्ति होती है, कैसा अपार विश्वास होता है! हृदय के कैसे-कैसे उद्‌गार निकलते हैं! वर्तमान कैसा आनन्दमय दिखायी पड़ता है और भविष्य के सम्बन्ध में कैसी लुभानेवाली कल्पनाएँ मन में रहती हैं! कितनी जल्दी बातें लगती हैं और कितनी जल्दी मानना-मनाना होता है! 'सहपाठी की मित्रता' इस उक्ति में हृदय के कितने भारी उथल-पुथल का भाव भरा हुआ है! किन्तु जिस प्रकार युवा पुरुष की मित्रता स्कूल के बालक की मित्रता से दृढ़, शान्त और गम्भीर होती है, उसी प्रकार हमारी युवावस्था के मित्र बाल्यावस्था के मित्रों से कई बातों में भिन्न होते हैं। मैं समझता हूँ कि मित्र चाहते हुए बहुत-से लोग मित्र के आदर्श की कल्पना मन में करते होंगे, पर इस कल्पित आदर्श से तो हमारा काम जीवन की झंझटों में चलता नहीं। सुन्दर प्रतिमा, मनभावनी चाल और स्वच्छन्द प्रकृति ये ही दो-चार बातें देखकर मित्रता की जाती है; पर जीवन-संग्राम में साथ देनेवाले मित्रों में इनमें से कुछ अधिक बातें चाहिए। मित्र केवल उसे नहीं कहते, जिसके गुणों की तो हम प्रशंसा करें, पर जिससे हम स्नेह न कर सकें। जिससे अपने छोटे-छोटे काम तो हम निकालते जायँ, पर भीतर-ही-भीतर घृणा करते रहें? मित्र सच्चे पथ-प्रदर्शक के समान होना चाहिए, जिस पर

हम पूरा विश्वास कर सकें, भाई के समान होना चाहिए, जिसे हम अपना प्रीति-पात्र बना सकें। हमारे और हमारे मित्र के बीच सच्ची सहानुभूति होनी चाहिए—ऐसी सहानुभूति, जिससे एक के हानि-लाभ को दूसरा अपना हानि-लाभ समझे। मित्रता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो मित्र एक ही प्रकार का कार्य करते हों या एक ही रुचि के हों। इसी प्रकार प्रकृति और आचरण की समानता भी आवश्यक या वांछनीय नहीं है। दो भिन्न प्रकृति के मनुष्यों में बराबर प्रीति और मित्रता रही है। राम धीर और शान्त प्रकृति के थे, लक्ष्मण उग्र और उद्धत स्वभाव के थे, पर दोनों भाइयों में अत्यन्त प्रगाढ़ स्नेह था। उदार तथा उच्चाशय कर्ण और लोभी दुर्योधन के स्वभावों में कुछ विशेष समानता न थी, पर उन दोनों की मित्रता खूब निभी। यह कोई बात नहीं है कि एक ही स्वभाव और रुचि के लोगों में ही मित्रता हो सकती है। समाज में विभिन्नता देखकर लोग एक-दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं। जो गुण हममें नहीं हैं, हम चाहते हैं कि कोई ऐसा मित्र मिले, जिसमें वे गुण हों। चिन्ताशील मनुष्य प्रफुल्लित चित्त का साथ ढूँढ़ता है, निर्बल बली का, धीर उत्साही का। उच्च आकांक्षा वाला चन्द्रगुप्त युक्ति और उपाय के लिए चाणक्य का मुँह ताकता था। नीति-विशारद अकबर मन बहलाने के लिए बीरबल की ओर देखता था।

मित्र का कर्त्तव्य इस प्रकार बताया गया है—'उच्च और महान् कार्यों में इस प्रकार सहायता देना, मन बढ़ाना और साहस दिलाना कि तुम अपनी निज की सामर्थ्य से बाहर काम कर जाओ।' यह कर्त्तव्य उसी से पूरा होगा, जो दृढ़-चित्त और सत्य-संकल्प का हो। इससे हमें ऐसे ही मित्रों की खोज में रहना चाहिए, जिनमें हमसे अधिक आत्मबल हो। हमें उनका पल्ला उसी तरह पकड़ना चाहिए, जिस तरह सुग्रीव ने राम का पल्ला पकड़ा था। मित्र हों तो प्रतिष्ठित और शुद्ध हृदय के हों, मृदुल और पुरुषार्थी हों, शिष्ट और सत्यनिष्ठ हों, जिससे हम अपने को उनके भरोसे पर छोड़ सकें और यह विश्वास कर सकें कि उनसे किसी प्रकार का धोखा न होगा।

जो बात ऊपर मित्रों के सम्बन्ध में कही गयी है, वही जान-पहचान वालों के सम्बन्ध में भी ठीक है। जान-पहचान के लोग ऐसे हों, जिनसे हम कुछ लाभ उठा सकते हों, जो हमारे जीवन को उत्तम और आनन्दमय करने में कुछ सहायता दे सकते हों, यद्यपि उतनी नहीं, जितनी गहरे मित्र दे सकते हैं। मनुष्य का जीवन थोड़ा है, उसमें खोने के लिए समय नहीं। यदि क, ख और ग हमारे लिए कुछ नहीं कर सकते हैं, न कोई बुद्धिमानी या विनोद की बातचीत कर सकते हैं, न कोई अच्छी बात बतला सकते हैं, न सहानुभूति द्वारा हमें ढाढ़स बँधा सकते हैं, न हमारे आनन्द में सम्मिलित हो सकते हैं, न हमें कर्त्तव्य का ध्यान दिला सकते हैं तो ईश्वर हमें उनसे दूर ही रखे। हमें अपने चारों ओर जड़ मूर्तियाँ सजाना नहीं है। आजकल जान-पहचान बढ़ाना कोई बड़ी बात नहीं है। कोई भी युवा पुरुष ऐसे अनेक युवा पुरुषों को पा सकता है, जो उसके साथ थियेटर देखने जायँगे, नाच-रंग में जायँगे, सैर-सपाटे में जायँगे, भोजन का निमन्त्रण स्वीकार करेंगे। यदि ऐसे जान-पहचान के लोगों से कुछ हानि न होगी तो लाभ भी न होगा। पर यदि हानि होगी तो बड़ी भारी होगी। सोचो तो तुम्हारा जीवन कितना नष्ट होगा। यदि ये जान-पहचान के लोग उन मनचले युवकों में से निकले जिनकी संख्या दुर्भाग्यवश आजकल बहुत बढ़ रही है, यदि उन शोहदों में से निकले, जो अमीरों की बुराइयों और मूर्खताओं की नकल किया करते हैं, दिन-रात बनाव-सिंगार में रहा करते हैं, महफिलों में 'ओ-हो-हो', 'वाह-वाह' किया करते हैं, गलियों में ठट्ठा मारते हैं और सिगरेट का धुआँ उड़ाते चलते हैं। ऐसे नवयुवकों से बढ़कर शून्य, निःसार और शोचनीय जीवन और किसका है? वे अच्छी बातों के सच्चे आनन्द से कोसों दूर हैं। उनके लिए न तो संसार में सुन्दर और मनोहर उक्ति वाले कवि हुए हैं और न संसार में सुन्दर आचरण वाले महात्मा हुए हैं। उनके लिए न तो बड़े-बड़े वीर अद्‌भुत कर्म कर गये हैं और न बड़े-बड़े ग्रन्थकार ऐसे विचार छोड़ गये हैं, जिनसे मनुष्य जाति के हृदय में सात्विकता की उमंगें उठती हैं। उनके लिए फूल-पत्तियों में कोई सौन्दर्य नहीं, झरनों के कल-कल में मधुर संगीत नहीं, अनन्त सागर-तरंगों पर गम्भीर रहस्यों का आभास नहीं, उनके भाग्य में सच्चे प्रयत्न और पुरुषार्थ का आनन्द नहीं, उनके भाग्य में सच्ची प्रीति का सुख और कोमल हृदय की शान्ति नहीं। जिनकी आत्मा अपने इन्द्रिय-विषयों में ही लिप्त है; जिनका हृदय नीचाशयों और कुत्सित विचारों से कलुषित है, ऐसे नाशोन्मुख प्राणियों को दिन-दिन अन्धकार में पतित होते देख कौन ऐसा होगा, जो तरस न खायेगा? उसे ऐसे प्राणियों का साथ न करना चाहिए।

मकदूनिया का बादशाह डेमेट्रियस कभी-कभी राज्य का सब काम छोड़ अपने ही मेल के दस-पाँच साथियों को लेकर विषय-वासना में लिप्त रहा करता था। एक बार बीमारी का बहाना करके इसी प्रकार वह अपने दिन काट रहा था। इसी बीच उसका पिता उससे मिलने के लिए गया और उसने एक हँसमुख जवान को कोठरी से बाहर निकलते देखा। जब पिता कोठरी के भीतर पहुँचा, तब डेमेट्रियस ने कहा—'ज्वर ने मुझे अभी छोड़ा है।' पिता ने कहा—'हाँ! ठीक है, वह दरवाजे पर मुझे मिला था।'

कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है। यह केवल नीति और सद्वृत्ति का ही नाश नहीं करता, बल्कि बुद्धि का भी क्षय करता है। किसी युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी, तो वह उसके पैरों में बँधी चक्की के समान होगी, जो उसे दिन-दिन अवनति के गड्ढे में गिराती जायगी और यदि अच्छी होगी तो सहारा देनेवाली बाहु के समान होगी, जो उसे निरन्तर उन्नति की ओर उठाती जायगी।

इंग्लैण्ड के एक विद्वान् को युवावस्था में राज-दरबार में जगह नहीं मिली। इस पर जिन्दगी भर वह अपने भाग्य को सराहता रहा। बहुत-से लोग इसे अपना बड़ा दुर्भाग्य समझते, पर वह अच्छी तरह जानता था कि वहाँ वह बुरे लोगों की संगति में पड़ता, जो उसकी आध्यात्मिक उन्नति में बाधक होते। बहुत-से लोग ऐसे होते हैं, जिनके घड़ी भर के साथ से भी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है; क्योंकि उतने ही बीच में ऐसी-ऐसी बातें कही जाती हैं, जो कानों में न पड़नी चाहिए, चित्त पर ऐसे प्रभाव पड़ते हैं, जिनसे उसकी पवित्रता का नाश होता है। बुराई अटल भाव धारण करके बैठती है। बुरी बातें हमारी धारणा में बहुत दिनों तक टिकती हैं। इस बात को प्रायः सभी लोग जानते हैं कि भद्दे व फूहड़ गीत जितनी जल्दी ध्यान पर चढ़ते हैं, उतनी जल्दी कोई गम्भीर या अच्छी बात नहीं। एक बार एक मित्र ने मुझसे कहा कि उसने लड़कपन में कहीं से एक बुरी कहावत सुन पायी थी, जिसका ध्यान वह लाख चेष्टा करता है कि न आये, पर बार-बार आता है। जिन भावनाओं को हम दूर रखना चाहते हैं, जिन बातों को हम याद करना नहीं चाहते, वे बार-बार हृदय में उठती हैं और बेधती हैं; अतः तुम पूरी चौकसी रखो, ऐसे लोगों को कभी साथी न बनाओ, जो अश्लील, अपवित्र और फूहड़ बातों से तुम्हें हँसाना चाहें। सावधान रहो, ऐसा न हो कि पहले-पहल तुम इसे एक बहुत सामान्य बात समझो और सोचो कि एक बार ऐसा हुआ, फिर ऐसा न होगा अथवा तुम्हारे चरित्र-बल का ऐसा प्रभाव पड़ेगा कि ऐसी बातें बकने वाले आगे चलकर आप सुधर जायँगे। नहीं, ऐसा नहीं होगा। जब एक बार मनुष्य अपना पैर कीचड़ में डाल देता है, तब फिर यह नहीं देखता कि वह कहाँ और कैसी जगह पैर रखता है। धीरे-धीरे उन बुरी बातों में अभ्यस्त होते-होते तुम्हारी घृणा कम हो जायगी। पीछे तुम्हें उनसे चिढ़ न मालूम होगी; क्योंकि तुम यह सोचने लगोगे कि चिढ़ने की बात ही क्या है। तुम्हारा विवेक कुण्ठित हो जायगा और तुम्हें भले-बुरे की पहचान न रह जायगी। अन्त में होते-होते तुम भी बुराई के भक्त बन जाओगे; अतः हृदय को उज्ज्वल और निष्कलंक रखने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि बुरी संगत की छूत से बचो। यह पुरानी कहावत है कि—

''काजल की कोठरी में कैसो हू सयानो जाय,
एक लीक काजल की लागि है पै लागि है।''

● **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल**

॥ अभ्यास प्रश्न ॥

1. निम्नलिखित गद्यांशों के नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

(क) हम लोग कच्ची मिट्टी की मूर्ति के समान रहते हैं जिसे जो जिस रूप का चाहे उस रूप का करे–चाहे राक्षस बनावे, चाहे देवता। ऐसे लोगों का साथ करना हमारे लिए बुरा है जो हमसे अधिक दृढ़ संकल्प के हैं; क्योंकि हमें उनकी हर एक बात बिना विरोध के मान लेनी पड़ती है। पर ऐसे लोगों का साथ करना और बुरा है, जो हमारी ही बात को ऊपर रखते हैं; क्योंकि ऐसी दशा में न तो हमारे ऊपर कोई दबाव रहता है और न हमारे लिए कोई सहारा रहता है। **(2018HF)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) हमें किन लोगों का साथ नहीं करना चाहिए?

(ख) ''विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है। जिसे ऐसा मित्र मिल जाये उसे समझना चाहिए कि खजाना मिल गया।'' विश्वासपात्र मित्र जीवन की एक औषध है। हमें अपने मित्रों से यह आशा रखनी चाहिए कि वे उत्तम संकल्पों से हमें दृढ़ करेंगे, दोषों और त्रुटियों से हमें बचाएँगे, हमारे सत्य, पवित्रता और मर्यादा के प्रेम को पुष्ट करेंगे, जब हम कुमार्ग पर पैर रखेंगे, तब वे हमें सचेत करेंगे, जब हम हतोत्साहित होंगे तब वे हमें उत्साहित करेंगे। सारांश यह है कि वे हमें उत्तमतापूर्वक जीवन-निर्वाह करने में हर

प्रकार से सहायता देंगे। सच्ची मित्रता में उत्तम से उत्तम वैद्य की-सी निपुणता और परख होती है, अच्छी-से-अच्छी माता का-सा धैर्य और कोमलता होती है, ऐसी ही मित्रता करने का प्रयत्न प्रत्येक पुरुष को करना चाहिए। **(2016CB,CE,20MF)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) (a) हमें अपने मित्रों से क्या आशा करनी चाहिए?

अथवा **लेखक ने सच्ची मित्रता की तुलना किससे की है?**

अथवा **विश्वासपात्र मित्र की तुलना किससे की है?**

(iii) (b) लेखक ने अच्छे मित्र के क्या-क्या कर्त्तव्य बताये हैं?

(ग) मित्र केवल उसे नहीं कहते, जिसके गुणों की तो हम प्रशंसा करें, पर जिससे हम स्नेह न कर सकें। जिससे अपने छोटे-छोटे काम तो हम निकालते जायँ पर भीतर-ही-भीतर घृणा करते रहें? मित्र सच्चे पथ-प्रदर्शक के समान होना चाहिए, जिस पर हम पूरा विश्वास कर सकें; भाई के समान होना चाहिए, जिसे हम अपना प्रीति-पात्र बना सकें। हमारे और हमारे मित्र के बीच सच्ची सहानुभूति होनी चाहिए–ऐसी सहानुभूति, जिससे एक के हानि-लाभ को दूसरा अपना हानि-लाभ समझे। मित्रता के लिए यह आवश्यक नहीं कि दो मित्र एक ही प्रकार के कार्य करते हों या एक ही रुचि के हों। इसी प्रकार प्रकृति और आचरण की समानता भी आवश्यक या वांछनीय नहीं है। दो भिन्न प्रकृति के मनुष्यों में बराबर प्रीति और मित्रता रही है। **(2017AA,19AF)**

अथवा **मित्र सच्चे पथ-प्रदर्शक ..... प्रीति और मित्रता रही है।**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) (a) मित्र किसे कहते हैं?

(b) हमारे और हमारे मित्र के बीच कैसी सहानुभूति होनी चाहिए?

(c) सच्चा मित्र कैसा होना चाहिए?

(घ) यह कोई बात नहीं है कि एक ही स्वभाव और रुचि के लोगों में ही मित्रता हो सकती है। समाज में विभिन्नता देखकर लोग एक-दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं। जो गुण हममें नहीं हैं, हम चाहते हैं कि कोई ऐसा मित्र मिले, जिसमें वे गुण हों। चिन्ताशील मनुष्य प्रफुल्लित चित्त का साथ ढूँढ़ता है, निर्बल बली का, धीर उत्साही का। उच्च आकांक्षा वाला चन्द्रगुप्त युक्ति और उपाय के लिए चाणक्य का मुँह ताकता था। नीति-विशारद अकबर मन बहलाने के लिए बीरबल की ओर देखता था।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक के अनुसार समाज में विभिन्नता देखकर लोग एक-दूसरे की ओर क्यों आकर्षित होते हैं?

(ङ) मित्र का कर्त्तव्य इस प्रकार बताया गया है–'उच्च और महान् कार्य में इस प्रकार सहायता देना, मन बढ़ाना और साहस दिलाना कि तुम अपनी निज की सामर्थ्य से बाहर काम कर जाओ।' यह कर्त्तव्य उसी से पूरा होगा, जो दृढ़-चित्त और सत्य-संकल्प का हो। इससे हमें ऐसे ही मित्रों की खोज में रहना चाहिए, जिनमें हमसे अधिक आत्मबल हो। हमें उनका पल्ला उसी तरह पकड़ना चाहिए, जिस तरह सुग्रीव ने राम का पल्ला पकड़ा था। मित्र हों तो प्रतिष्ठित और शुद्ध हृदय के हों, मृदुल और पुरुषार्थी हों, शिष्ट और सत्यनिष्ठ हों, जिससे हम अपने को उनके भरोसे पर छोड़ सकें और यह विश्वास कर सकें कि उनसे किसी प्रकार का धोखा न होगा। **(2018HA)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) हमें कैसे मित्रों की खोज में रहना चाहिए?

(च) उनके लिए न तो बड़े-बड़े वीर अद्भुत कार्य कर गये हैं और न बड़े-बड़े ग्रन्थकार ऐसे विचार छोड़ गये हैं, जिनसे मनुष्य जाति के हृदय में सात्विकता की उमंगें उठती हैं। उनके लिए फूल-पत्तियों में कोई सौन्दर्य नहीं, झरनों के कल-कल में मधुर संगीत

नहीं, अनन्त सागर-तरंगों पर गम्भीर रहस्यों का आभास नहीं, उनके भाग्य में सच्चे प्रयत्न और पुरुषार्थ का आनन्द नहीं, उनके भाग्य में सच्ची प्रीति का सुख और कोमल हृदय की शान्ति नहीं। जिनकी आत्मा अपने इन्द्रिय-विषयों में ही लिप्त है; जिनका हृदय नीचाशयों और कुत्सित विचारों से कलुषित है, ऐसे नाशोन्मुख प्राणियों को दिन-दिन अन्धकार में पतित होते देख कौन ऐसा होगा जो तरस न खाएगा? उसे ऐसे प्राणियों का साथ न करना चाहिए।

अथवा **उनके लिए फूल-पत्तियों में.....साथ नहीं करना चाहिए।** **(2020MD)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) (a) हमें किस प्रकार के प्राणियों का साथ नहीं करना चाहिए?

(b) लेखक किस बात पर तरस खाने की बात कह रहा है?

(छ) कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है। यह केवल नीति और सद्वृत्ति का ही नाश नहीं करता, बल्कि बुद्धि का भी क्षय करता है। किसी युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी, तो वह उसके पैरों में बँधी चक्की के समान होगी, जो उसे दिन-दिन अवनति के गड्ढे में गिराती जाएगी और यदि अच्छी होगी तो सहारा देने वाली सुदृढ़ बाहु के समान होगी, जो उसे निरन्तर उन्नति की ओर उठाती जायगी। **(2017AC, AF 19AE)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) (a) कुसंग का क्या प्रभाव होता है?

अथवा **कुसंग का प्रभाव व्यक्ति के जीवन पर किस प्रकार पड़ता है?**

अथवा **युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी तो उसका क्या परिणाम होगा?**

(b) कुसंग और अच्छी संगति में क्या अन्तर है?

(ज) सावधान रहो, ऐसा न हो कि पहले-पहल तुम इसे एक बहुत सामान्य बात समझो और सोचो कि एक बार ऐसा हुआ, फिर ऐसा न होगा अथवा तुम्हारे चरित्र-बल का ऐसा प्रभाव पड़ेगा कि ऐसी बातें बकने वाले आगे चलकर आप सुधर जायँगे। नहीं, ऐसा नहीं होगा। जब एक बार मनुष्य अपना पैर कीचड़ में डाल देता है, तब फिर यह नहीं देखता कि वह कहाँ और कैसी जगह पैर रखता है। धीरे-धीरे उन बुरी बातों में अभ्यस्त होते-होते तुम्हारी घृणा कम हो जायगी। पीछे तुम्हें उनसे चिढ़ न मालूम होगी; क्योंकि तुम यह सोचने लगोगे कि चिढ़ने की बात ही क्या है? तुम्हारा विवेक कुण्ठित हो जायगा और तुम्हें भले-बुरे की पहचान न रह जायगी। अन्त में होते-होते तुम भी बुराई के भक्त बन जाओगे; अतः हृदय को उज्ज्वल और निष्कलंक रखने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि बुरी संगत की छूत से बचो। **(2016CF)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) हृदय को उज्ज्वल रखने का क्या उपाय है?

(झ) बहुत से लोग ऐसे होते हैं जिनके घड़ी भर के साथ से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, क्योंकि उतने ही बीच में ऐसी-ऐसी बातें कही जाती हैं जो कानों में न पड़नी चाहिए, चित्त पर ऐसे प्रभाव पड़ते हैं, जिससे उसकी पवित्रता का नाश होता है। बुराई अटल भाव धारण करके बैठती है। बुरी बातें हमारी धारणा में बहुत दिनों तक टिकती हैं। **(2017AG)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) बुराई की प्रकृति कैसी होती है?

2. रामचन्द्र शुक्ल का जीवन-परिचय बताते हुए उनकी रचनाओं का उल्लेख कीजिए।**(2016CA, CF, 17AA, AC, AD, AE, 19AA, AC,AD,AG, 20MG,ME,MA,MF)**

अथवा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जीवन-परिचय दीजिए एवं उनकी किसी एक रचना का नाम लिखिए।

3. रामचन्द्र शुक्ल की भाषा-शैली स्पष्ट करते हुए उनकी साहित्यिक सेवाओं पर प्रकाश डालिए।
4. रामचन्द्र शुक्ल का जीवन-परिचय देते हुए उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
5. मित्र का चुनाव करने में हमें किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
6. विश्वासपात्र को जीवन की एक ओषधि क्यों कहा गया है?
7. मित्र का चुनाव करने में लोग प्रायः क्या भूल करते हैं?
8. बाल्यावस्था की मित्रता युवावस्था से किन बातों में भिन्न होती है?
9. 'दो भिन्न प्रकृति के मनुष्यों में बराबर प्रीति और मित्रता रही है।' लेखक के इस कथन को उदाहरणों से पुष्ट कीजिए।
10. लेखक कैसे लोगों से बचने की हमें शिक्षा देता है?
11. 'कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है।' लेखक ने ऐसा क्यों कहा है?
12. स्थिति जमाना, धड़ाधड़ बढ़ना, बात सूझना, धुन सवार होना, पल्ला पकड़ना, चौकसी रखना—इन क्रिया पदों का अर्थ बताइए और वाक्यों में इनका प्रयोग कीजिए।
13. कोमल, उपयुक्त, घन, गहरा, भारी शब्दों में प्रत्यय जोड़कर इनका संज्ञा रूप लिखिए।
14. अनन्त, अनुसन्धान, अत्यन्त, दुर्भाग्य, निस्सार इन शब्दों में उपसर्ग और मूल रूप अलग-अलग लिखिए।
15. निम्नलिखित शब्दों का समास विग्रह करते हुए समास का नाम बताइए–
विश्वासपात्र, सहानुभूति, उच्चाशय, जीवन-निर्वाह, हानि-लाभ।
16. निम्नलिखित शब्दों का तत्सम रूप बताइए–
चतुराई, बनाव, सिंगार, कान।

➥ आन्तरिक मूल्यांकन

(1) रामचन्द्र शुक्ल के समकालीन लेखकों की एक सूची बनाइए एवं उनकी एक-एक रचनाओं का भी उल्लेख कीजिए।
(2) मित्रता से होने वाले लाभों की एक सूची तैयार कीजिए।

शब्दार्थ

धड़ाधड़ = बहुत तेजी से। **परिणत** = बदलना। **अपरिमार्जित** = बिना शुद्ध किया हुआ। **चित्त** = हृदय। **प्रवृत्ति** = रुचि। **अपरिपक्व** = अविकसित। **संकल्प** = इच्छा। **हतोत्साहित** = उत्साह-रहित। **विवेक** = उचित-अनुचित को समझने की क्षमता। **प्रकृति** = स्वभाव। **अनुसन्धान** = खोज। **सुगम** = सरल। **निपुणता** = चतुरता। **खिन्नता** = दुःख। **अनुरक्ति** = प्रेम। **उद्‌गार** = भावनाएँ। **प्रतिमा** = मूर्ति। **सहानुभूति** = साथ-साथ सुख-दुःख का अनुभव करना। **वांछनीय** = चाहने योग्य। **उग्र** = तेज। **उद्धत** = अक्खड़। **प्रगाढ़** = गहरा। **प्रफुल्लित** = प्रसन्न। **नीति-विशारद** = नीति का विद्वान्। **मृदुल** = कोमल। **निःसार** = सारहीन। **कुत्सित** = बुरे। **नीचाशयों** = नीच विचारों। **कलुषित** = मलिन। **नाशोन्मुख** = नाश की ओर बढ़ते हुए। **क्षय** = विनाश। **चेष्टा** = प्रयत्न। **अभ्यस्त** = आदी। **निष्कलंक** = कलंक-रहित। **सयानो** = चतुर। **कुसंग** = बुरा साथ। **सद्‌वृत्ति** = अच्छा आचरण।

●●